■ संपादकीय

बदलाव का ब्लू प्रिंट

केंद्र सरकार रेलवे का मेकओवर करना चाहती है। मतलब यह कि वह उसमें बुनियादी सुधार कर उसे एक नया रूप देना चाहती है। बदलाव का ब्लूप्रिंट तैयार करने में विश्व बैंक मदद कर रहा है। वह इसके लिए 5 लाख करोड़ रुपये लगाने को तैयार है। इस महत्वाकांक्षी योजना का उद्देश्य रेलवे का आधुनिकीकरण और डिजिटलाइजेशन है। इसके जरिए यात्रियों को तमाम सुविधाएं उपलब्ध कराई जाएंगी और माल ढुलाई की स्थिति को बेहतर बनाया जाएगा। इसके तहत एक रेलवे विश्वविद्यालय और रेल टैरिफ अथॉरिटी बनाने की भी योजना है। रेलवे की रिसर्च क्वॉलिटी सुधारने और तकनीकी जरूरतें पूरी करने के लिए वर्ल्ड बैंक नए रिसर्च ऐंड डिवेलपमेंट सेंटर के लिए अपनी विशेषज्ञ सेवाएं देगा। रेलवे भारतीयों की जीवन रेखा कही जाती है, लेकिन आज भी रेलयात्रा संतोषजनक नहीं है। न तो यात्रियों की सुरक्षा की कोई गारंटी है, न ट्रेनों के समय से पहुंचने की, न स्वास्थ्यप्रद खानपान की, न साफ-सफाई की। सच कहा जाए तो भारतीय समाज में गरीब और अमीर का जो भीषण विभाजन है, वह भारतीय रेलवे में कुछ ज्यादा ही मुखरता से जाहिर हो रहा है। सरकारों ने संपन्न वर्ग को लुभाने के लिए कुछ अच्छी ट्रेनें चला दी हैं। उनका सारा ध्यान भी उन्हीं ट्रेनों पर रहता है, हालांकि उनकी हालत भी अच्छी नहीं रह गई है। सामान्य यात्रियों को देने के लिए बस इतना ही है कि यात्री किराया न बढ़ाया जाए, या कम बढ़ाया जाए। रेलवे राजनीति का एक टूल बनी हुई है। राजनीतिक लाभ के लिए इसमें मनमाने ढंग से नियुक्तियां हुई हैं। अनेक सेवाओं के लिए अपने चहेतों को ठेके दिए गए हैं, जिनसे रेलवे का कबाड़ा हो गया है। गाड़ियां किसी तरह दौड़ा लेने के अलावा रेल प्रशासन कुछ भी नया कर पाने में अक्षम है। न तो खराब ट्रैक और पुलों का मरम्मत हो पा रहा है, न खानपान सेवा सुधर पा रही है, न स्टेशनों का ढंग से मेंटिनेंस हो पा रहा है, न ही बिना फाटक वाली रेल क्रॉसिंगों को हटाना संभव हो पा रहा है। ढुलाई में भी प्रफेशनल रवैया न हो पाने के कारण राजस्व में इजाफा नहीं हो पा रहा है। रेलवे को आमूल-चूल बदलने की जरूरत है। लेकिन इसके लिए अब तक न तो कोई विजन दिखा है, न ही फंड।

> **रेलवे राजनीति का एक टूल बनी हुई है। राजनीतिक लाभ के लिए इसमें मनमाने ढंग से नियुक्तियां हुई हैं। अनेक सेवाओं के लिए अपने चहेतों को ठेके दिए गए हैं, जिनसे रेलवे का कबाड़ा हो गया है। गाड़ियां किसी तरह दौड़ा लेने के अलावा रेल प्रशासन कुछ भी नया कर पाने में अक्षम है। न तो खराब ट्रैक और पुलों का मरम्मत हो पा रहा है, न खानपान सेवा सुधर पा रही है, न स्टेशनों का ढंग से मेंटिनेंस हो पा रहा है, न ही बिना फाटक वाली रेल क्रॉसिंगों का हटाना संभव हो पा रहा है।**

जरूरी है जनमत का प्रभावी अंकुश

मध्य प्रदेश के एक मंत्री द्वारा राष्ट्रपति पद के लिए हुए चुनाव में मतदान न कर पाने से चुनाव नतीजों पर भले ही कुछ खास असर न पड़ पाया हो, पर एक मंत्री को वोट देने के अयोग्य करार देने की चुनाव आयोग की यह कार्रवाई निश्चित रूप से एक गंभीर और महत्वपूर्ण घटना है, जिस पर उस हर नागरिक को विचार करना चाहिए जो देश में जनतांत्रिक परंपराओं के क्षरण से चिंतित है। संबंधित मंत्री पर आरोप था कि वर्ष 2008 के चुनाव में उन्होंने पैसे देकर अखबारों में खबरें छपवायी थीं और खर्च को उन्होंने अपने चुनावी खर्च में नहीं जोड़ा था।

विश्वनाथ सचदेव

चुनाव आयोग ने जांच में इस आरोप को सही पाया और मंत्री महोदय को तीन वर्ष के लिए चुनाव लड़ने के अयोग्य घोषित कर दिया है। न्यायालय ने भी इस मामले में संबंधित मंत्री को किसी प्रकार की रियायत देने से इनकार कर दिया। परिणामस्वरूप वे राष्ट्रपति-पद के लिए हुए मतदान में भाग नहीं ले पाये। अब स्थिति यह है कि दिल्ली उच्च न्यायालय इस बारे संबंधित मंत्री नरोत्तम मिश्र द्वारा चुनाव आयोग की कार्रवाई को दी गयी चुनौती पर विचार करेगा। इस बीच राज्य की भाजपा सरकार ने कहा है कि मंत्री महोदय छह माह तक अपने पद पर बने रह सकते हैं!

तो क्या इस मामले को फिलहाल यहीं खत्म मान लिया जाये? नहीं, यह मामला मात्र व्यक्ति द्वारा पैसे देकर 'खबर' छपवाने और खर्च का ब्योरा चुनाव-आयोग को न देने तक सीमित नहीं है। इस मामले का सीधा रिश्ता उस बीमारी से है जो एक ओर हमारी चुनाव-प्रणाली के औचित्य पर प्रश्नचिन्ह लगा रही है और दूसरी ओर मीडिया की पारदर्शिता और भूमिका को संदेह के घेरे में खड़ा कर रही है। इस बीमारी का नाम है 'पेड न्यूज़' यानी पैसे देकर विज्ञापन को 'खबर' के रूप में छपवाना।

नयी नहीं है यह बीमारी, पर पिछले दो आम चुनावों में इसका प्रकोप पहले की अपेक्षा कहीं ज्यादा दिखा था और इस खतरे की गंभीरता को अनुभव भी किया गया था। लेकिन दुर्भाग्य से, इस मामले को संबंधित पक्षों ने उतनी गंभीरता से लेना ज़रूरी नहीं समझा। मान लिया कि यह चुनावी गोरखधंधा तो ऐसे ही चलता रहेगा। राजनीतिक दलों और मीडिया से जुड़ी यह बीमारी वस्तुतः हमारी समूची जनतांत्रिक परंपराओं पर धब्बा लगाने वाली है।

विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका के साथ 'खबर' पालिका यानी मीडिया को जनतंत्र का चौथा स्तंभ माना गया है। किसी भी एक स्तंभ की कमज़ोरी पूरे तंत्र को कमज़ोर बनाती है। इसलिए ज़रूरी है कि चारों स्तंभों की मज़बूती को लगातार जांचा-परखा जाता रहे और किसी भी कमज़ोरी को तत्काल ठीक करने की कोशिश हो। एक मंत्री को मतदान के लिए अयोग्य करार दिये जाने की इस घटना को एक चेतावनी के रूप में लिया जाना चाहिए और 'पेड न्यूज़' के इस खतरे का मुकाबला करने की आवश्यकता और इसके इलाज के बारे में सभी संबंधित पक्षों को गंभीर और ठोस कार्रवाई करनी चाहिए।

सभी संबंधित पक्ष यानी पैसे देकर 'खबर' छपवाने वाला व्यक्ति या दल, पैसे लेकर 'खबर' छापने या प्रसारित करने वाला मीडिया और संसद, जिस पर यह ज़िम्मेदारी है कि इस संदर्भ में उचित कानून बनाकर जनतंत्र को कमज़ोर बनाने वाली इस प्रवृत्ति पर अंकुश लगाये। सवाल सिर्फ कुछ पैसों के लेनदेन का नहीं है, सवाल है राजनीति और पत्रकारिता, दोनों, की नैतिकता का। मीडिया में जो कुछ भी लिखा या दिखाया जाता है, जनता सहज ही उस पर विश्वास कर लेती है। पेड न्यूज़ विश्वसनीयता के आधार पर ही हमला करती है। सवाल उठता है क्या दोषी सिर्फ वही है जो पैसे देकर 'खबर' छपवाता या प्रसारित करवाता है? क्या इस बेईमानी में मीडिया बराबर का हिस्सेदार नहीं है? और सवाल यह भी है कि क्या संसद या सरकार पर कानून बनाने की ज़िम्मेदारी थोपकर समाज अपने दायित्व से पल्ला नहीं झाड़ रहा? ज़रूरत इन सारे प्रश्नों पर विचार करने की है, ठोस निष्कर्षों पर पहुंचने की है। सात साल पहले, सन् 2010 में, प्रेस काउंसिल आफ इंडिया ने उस हर समाचार या विश्लेषण को पेड न्यूज़ बताया था जो पैसे या अन्य किसी प्रकार के लेनदेन के बदले मीडिया में छपता या प्रसारित होता है। काउंसिल ने यह भी कहा था कि पिछले छह दशकों में इस जटिल प्रक्रिया ने कई रूप लिये हैं। सीधे पैसे लेने-देने के अलावा विभिन्न अवसरों पर उपहार दिये जाने, पत्रकारों को विदेशी दौरों पर ले जाने के प्रलोभन आदि को भी काउंसिल ने पेड न्यूज़ के अंतर्गत रखा था। मीडिया कंपनियों और उद्योग-व्यवसाय-घरानों के बीच होने वाले समझौतों पर भी सवालिया निशान लगाये गये थे।

चुनाव आयोग ने इस प्रवृत्ति को मतदाता को भरमाने वाली बताते हुए फरवरी 2011 में विधि मंत्रालय को जनप्रतिनिधित्व कानून में उचित परिवर्तन करके पेड न्यूज़ के अपराधियों को दो साल की जेल का प्रावधान रखने का सुझाव भी दिया था। विधि आयोग ने भी चुनाव आयोग के इस सुझाव को स्वीकार किये जाने की सलाह दी थी। लेकिन सुझाव अपनी जगह हैं और संबंधित पक्षों के स्वार्थ अपनी जगह। वैसे तो यह भी कोई ज़रूरी नहीं कि कानून बन जाने से बीमारी समाप्त ही हो जाती है, फिर भी यह उम्मीद की जा सकती है कि कानून का पालन करने की ज़िम्मेदारी जिन पर है, और पालन करवाने वाले भी कानूनी प्रावधानों से कुछ प्रेरित होंगे।

बहरहाल, इस संदर्भ में मीडिया की भूमिका सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। सवाल मीडिया पर नागरिक के भरोसे का है और व्यावसायिक स्वार्थों के चलते मीडिया यह भरोसा खोता जा रहा है। ज़रूरी है कि अपनी महत्ता और औचित्य को सिद्ध करने के लिए मीडिया अपनी विश्वसनीयता को बनाये रखने के प्रति निरंतर सजग रहे। लेकिन, दुर्भाग्य से, आज स्थिति यह बन गयी है कि कुछ अपवादों को छोड़ दें तो मीडिया इस सजगता की आवश्यकता को ही महसूस करता नहीं दिख रहा। 'खबर' देने के बजाय 'खबर' बेचने की प्रवृत्ति हावी होती जा रही है। जनतांत्रिक मूल्यों का तकाज़ा है कि इस प्रवृत्ति पर अंकुश लगे। अब यह मीडिया पर निर्भर करता है कि वह स्वयं अंकुश लगाता है या अंकुश बाहर का हो। बाहर के अंकुश को स्वीकारना मुश्किल है- आवश्यकता आत्मानुशासन की है। फिर भी पेड न्यूज़ के हवाले से कुछ कानून तो बनाये ही जा सकते हैं। मसलन, मध्य प्रदेश के मंत्री महोदय का मामला ही लें।

पीड़िता को राहत देने की हो कोशिश

वर्ष 2012 के निर्भया सामूहिक बलात्कार और हत्याकांड के बाद इस तरह के अपराधों के लिये कानून में कड़ी सजा का प्रावधान किया गया। ऐसे मुकदमों की सुनवाई दो महीने के भीतर पूरी करने का प्रावधान भी किया गया। अब अचानक ही चर्चा शुरू हो गयी है कि अदालत में आरोप पत्र दाखिल होने के बाद दो महीने के भीतर मुकदमे की सुनवाई पूरी करना व्यावहारिक नहीं है। सवाल उठता है कि अदालत में आरोप पत्र दाखिल होने के बाद कानूनी प्रावधान के तहत ऐसे मुकदमों की सुनवाई दो महीने में पूरा करना व्यावहारिक क्यों नहीं है?

अनूप भटनागर

बलात्कार के मामलों में आरोप पत्र दाखिल होने के बाद अदालतों ने सख्ती बरतते हुए इससे भी कम समय में सुनवाई पूरी की है। एक तर्क यह दिया जा रहा है कि बलात्कार पीड़िता की गवाही ही पूरी करने में कई महीने लग जाते हैं। मान लिया कि ऐसा हो रहा है तो क्या पीड़िता की काउंसलिंग की प्रक्रिया को गति नहीं प्रदान की जा सकती? उसे पूरी तरह आश्वस्त क्यों नहीं किया जा सकता कि अदालत में उसे असहज स्थिति से नहीं गुजरना पड़ेगा।

दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 309 में 2013 में किये गये नये प्रावधान से उत्पन्न स्थिति के परिप्रेक्ष्य में बलात्कार पीड़ितों के मुकदमों की सुनवाई का कानून मंत्रालय और संयुक्त राष्ट विकास कार्यक्रम ने संयुक्त रूप से अध्ययन कराया था। इस दौरान दिल्ली उच्च न्यायालय की अनुमति से बलात्कार के मुकदमों की सुनवाई कर रही चार त्वरित अदालतों के 16 मुकदमों का अध्ययन किया गया। इसमें पाया गया कि चार में से सिर्फ एक अदालत ही निर्धारित प्रक्रिया का पालन करते हुए मुकदमों की तेजी से सुनवाई पूरा करने का प्रयास कर रही है। बलात्कार के मुकदमों की सुनवाई के लिये राज्यों में त्वरित अदालतें गठित करने का भी निर्णय लिया गया था लेकिन क्या उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश और महाराष्ट्र जैसे बड़े राज्यों में पर्याप्त संख्या में त्वरित अदालतें गठित की गयी हैं? शायद नहीं, सरकार को इस ओर भी ध्यान देना चाहिए। इस तरह के मुकदमों की सुनवाई के लिये निर्धारित प्रक्रिया के अंतर्गत प्रावधान है कि बलात्कार के प्रत्येक मुकदमे के सारे गवाहों के बयान दर्ज होने का काम पूरा होने तक रोजाना सुनवाई होगी। यदि न्यायाधीश को महसूस होता कि अपरिहार्य कारणों से सुनवाई स्थगित करनी जरूरी है तो उसे इसके कारण रिकार्ड करने होंगे। निर्भया कांड के बाद पूर्व प्रधान न्यायाधीश जगदीश शरण वर्मा की अध्यक्षता में गठित समिति ने बलात्कार के अपराध से संबंधित कानूनों में व्यापक संशोधन की सिफारिश की थी। इन्हीं सिफारिशों के अनुरूप 2013 में दंड प्रक्रिया संहिता की विभिन्न धाराओं में नये प्रावधान शामिल किये गये थे। इसी तरह धारा 309 में यह प्रावधान किया गया था कि ऐसे मुकदमों की सुनवाई जब तक नितांत आवश्यक नहीं हो, स्थगित नहीं की जाये। इस

धारा में यह प्रावधान भी किया गया था कि अदालतों को बलात्कार के मुकदमों की सुनवाई दो महीने के भीतर पूरी करने का प्रयास करना चाहिए लेकिन वास्तव में ऐसा हो नहीं पा रहा है। मुकदमों की सुनवाई में विलंब की एक वजह तो फारेंसिक साइंस प्रयोगशाला से समय पर रिपोर्ट नहीं मिलना है। दूसरी वजह आरोपियों द्वारा नाना प्रकार के कारणों से तारीख पर तारीख लेने का प्रयास है। निर्भया कांड में ही अदालत में तीन जनवरी, 2013 को आरोप पत्र दाखिल किया गया और मुकदमे का फैसला 10 सितंबर, 2013 को आ गया था। मतलब अगर पूरी संजीदगी से ऐसे मुकदमों में अभियोजन पक्ष काम करे तो एक साल से कम समय में आरोपियों को सजा दिलायी जा सकती है। लेकिन इसके बाद दोषियों ने अपील की, जिस पर दिल्ली उच्च न्यायालय का फैसला 15 मार्च, 2014 को आया और उच्चतम न्यायालय ने इस साल पांच मई को अपना निर्णय सुनाया। इन दोषियों के पास अभी भी कुछ विकल्प उपलब्ध हैं। ठीक इसी तरह, पुणे में अक्तूबर, 2009 को एक साफ्टवेयर इंजीनियर के अपहरण, बलात्कार और हत्या के मामले में अदालत में सुनवाई 2011 में शुरू हुई और निचली अदालत का निर्णय करीब छह साल बाद इस साल मई में आया।

फेसबुक पर अब 45 भाषाओं में लिखें पोस्ट

सोशल नेटवर्किंग साइट फेसबुक अपने यूजर्स के लिए नित नए प्रयोग करते रहा है। बढ़ती प्रतिस्पर्धा में अपने यूजर्स को अपने साथ बनाए रखने इसकी टीम निरंतर कुछ नया करने का प्रयास करते रहती है। पहले इसने भारतीय भाषाओं में पोस्ट करने की सुविधा यूजर्स को दी, जिससे विभिन्न भाषायी प्रशंसकों को इसने अपना फॉलोअर बनाया। इनमें मराठी, बांग्ला, कन्नड जैसी अनेक लीपियां शामिल की गई। इसी कड़ी में फेसबुक यूजर्स के लिए यह खुशखबरी है। फेसबुक पर अब आप जल्द ही 45 भाषाओं में अपनी पोस्ट लिख सकेंगे। खबर है कि यह कंपनी अब एक ऐसा सॉफ्टवेयर विकसित कर रही है जिसके तहत फेसबुक यूजर अपनी पोस्ट को दुनिया की कई भाषाओं में ट्रांसलेट किया जा सकता है। यह सॉफ्टवेयर आपकी पोस्ट किसी भी व्यक्ति को उसकी मनचाही भाषा में दिखाएगा।

WEB कॉर्नर

ऐसे होगा कई भाषाओं का यूज

फेसबुक के इस सॉफ्टवेयर की सबसे खास बात ये होगी कि आपको सिर्फ अपनी पोस्ट लिखनी है। इसके बाद 45 भाषाओं की दी गई सूची में उन भाषाओं को चुनना है, जिन-जिन में आप अपनी पोस्ट को अनुवादित करना चाहते हैं। इस सूची में फ्रेंच से लेकर फिलिपिनो और लिथुआनियन जैसी भाषाएं भी शामिल हैं।

5000 फेसबुक पेज कर चुके यूज

हालांकि फेसबुक के इस नए फीचर का अभी तक एक छोटे से ग्रुप में ही परीक्षण किया गया है। फेसबुक के अनुसार, अब तक इस फीचर का उपयोग 5000 फेसबुक पेज द्वारा किया जा चुका है, लेकिन ये फेसबुक पेज बिजनेस वाले थे। लेकिन अब जल्द ही इस फीचर को अन्य यूजर्स के लिए भी जारी किया जा रहा है।

■ जीने का सलीका

बात साबरमती आश्रम में गांधी जी के प्रवास के दिनों की है। एक दिन एक गाँव के कुछ लोग बापू के पास आए और उनसे कहने लगे, बापू कल हमारे गाँव में एक सभा हो रही है, यदि आप समय निकाल कर जनता को देश की स्थिति व स्वाधीनता के प्रति कुछ शब्द कहें तो आपकी कृपा होगी। गांधी जी ने अपना कल का कार्यक्रम देखा और गाँव के लोगों के मुखिया से पूछा, सभा के कार्यक्रम का समय कब है? मुखिया ने कहा, हमने चार बजे निश्चित कर रखा है। गांधी जी ने आने की अपनी अनुमति दे दी। मुखिया बोला, बापू मैं गाड़ी से एक व्यक्ति को भेज दूँगा, जो आपको ले आएगा। गांधी जी बोले, अच्छी बात है। अगले दिन जब पौने चार बजे तक मुखिया का आदमी नहीं पहुँचा तो गांधी जी चिंतित हो गए। उन्होंने सोचा अगर मैं समय से नहीं पहुँचा तो लोग क्या कहेंगे। गांधी जी ने एक तरीक़ा सोचा और उसी के अनुसार अमल किया। कुछ समय पश्चात मुखिया गांधी जी को लेने आश्रम पहुँचा तो गांधी जी को वहाँ न पाकर उन्हें बहुत आश्चर्य हुआ। मुखिया सभा स्थल पर पहुँचा तो उन्हें यह देख कर और आश्चर्य हुआ कि गांधी जी भाषण दे रहे हैं और सभी लोग तन्मयता से उन्हें सुन रहे हैं। भाषण के उपरांत मुखिया ने गांधी जी से पूछा, मैं आपको लेने आश्रम गया था लेकिन आप वहाँ नहीं मिले फिर आप यहाँ तक कैसे पहुँचे? गांधी जी ने कहा, जब आप पौने चार बजे तक नहीं पहुँचे तो मुझे चिंता हुई। मैंने साइकिल उठाई और तेज़ी से चलाते हुए यहाँ पहुँचा। मुखिया बहुत शर्मिंदा हुआ। गांधी जी ने कहा, समय बहुत मूल्यवान होता है।

■ ज्ञान की परख

1. किस लेखक ने मृत्युंजय उपन्यास लिखा है?
2. सौर ऊर्जा से रौशन पहली संसद कहां है?
3. संसद के पास कौन सा विशेष वाहन तैनात किया गया?
4. राष्ट्रीय जल समीक्षा समिति में राज्य के किस मंत्री को शामिल किया गया है?
5. 1 जुलाई को छत्तीसगढ़ शासन ने किस महती याजना का शुभारंभ किया?

1. शिवाजी सावंत 2. पाकिस्तान 3. ड्रोन 4. बृजमोहन अग्रवाल
5. हमर छत्तीसगढ़

■ पाठकों के पत्र

बंटवारे के मायने

पर्दा उठ चुका है और नतीजा ब्रेग्जिट के रूप में दुनिया के सामने है। इस नतीजे ने न सिर्फ सभी को चौंकाया बल्कि एक मुल्क को भी बांट दिया। इस अनहोनी को रोकने के लिए न सिर्फ खुद ब्रिटेन के प्रधानमंत्री डेविड कैमरन बल्कि अमरीका, जर्मनी, फ्रांस जैसे बड़े देश लगे हुए थे। पर ब्रिटेन के लोगों ने तय कर ही लिया था कि अभी नहीं तो कभी नहीं। अरसे से प्रवासियों की समस्या से जूझ रहे यूरोपीय संघ और कमजोर अर्थव्यवस्था ने लोगों में रोष भर दिया था। पिछले महीनों में यूरोप में हुए आतंककारी हमलों से तो ब्रिटेन में यूरोपीय संघ से अलग होने का भाव प्रबल हो चला था। हालांकि जनमत संग्रह से पहले हुए कई सर्वे में झुकाव तो यूनियन में रहने का था पर नतीजा रहा एकमद उलट। अब सवाल है कि इस ऐतिहासिक निर्णय का यूके, यूरोपीयन यूनियन पर क्या होगा असर और भारत के लिए क्या होंगे इसके मायने? ब्रिटेन संयुक्त राष्ट्र की सुरक्षा परिषद का स्थायी सदस्य होने के साथ नाटो के संस्थापक सदस्यों में से एक है। सब जानते हैं कि दोनों विश्वयुद्ध में ब्रिटेन की अहम भूमिका रही है। यूरोपीय समुदाय को विश्वयुद्ध के दुष्परिणामों के बाद फिर खड़ा करनेऔर जर्मनी को फिर बड़ी सैन्य शक्ति बनने से रोकने में भी ब्रिटेन की भूमिका रही है। संघ में यदि फ्रांस और जर्मनी को छोड़ दें तो अन्य देशों की तुलना में इसकी अर्थव्यवस्था काफी मजबूत है। यही वजह रही कि जनमत संग्रह के नतीजे के बाद ब्रिटेन से ज्यादा अन्य देशों के बाजारों में जबर्दस्त गिरावट देखने को मिली।

-प्रताप वर्मा, भिलाई

■ जरा इनकी भी सुनिए

मैंने पार्टी से अनुरोध किया था कि मुझे स्वास्थ्य के कारणों के चलते उत्तराखंड, हिमाचल प्रदेश के नेतृत्व की जिम्मेदारी से राहत प्रदान की जाए। हालांकि पार्टी ने अंबिका सोनी का इस्तीफा अभी मंजूर नहीं किया है।

-अंबिका सोनी
कांग्रेस महासचिव

आप अंदाजा लगा सकते हैं कि इससे आपका कितना यात्रा समय बचेगा। भविष्य की योजनाओं को साझा करते हुए प्रभु ने बताया कि 6 महीने पहले सरकार ने विश्व की प्रमुख टैक्नोलॉजी डेवलपरों से बात की ताकि ट्रेनों की गति को 600 किमी प्रतिघंटे तक बढ़ाया जा सके।

-सुरेश प्रभु
रेल मंत्री

'मैं उन्हें बताना चाहता हूं कि जब वे मुख्यमंत्री थे तब पाकिस्तान पर हमले की बात करते थे। तो ये दोहरा चेहरा क्यों? उनके इस विवादित बयान से सेना के मनोबल पर असर होगा।

-निर्मल सिंह

ट्विट ट्विट

मैं काफी समय से कह रहा हूं कि पीएम मोदी और एनडीए की नीतियों ने कश्मीर को जला दिया है। इसके साथ ही राहुल ने कहा कि जो कहा जा रहा है कि कश्मीर मुद्दे पर पाकिस्तान से और चीन से बात होनी चाहिए।

-राहुल गांधी